हरिराम मीना की आदिवासी कविताओं का कथ्य

डॉ. प्रवीण सक्सेना, नैहनू राम मीना

[1]शोध निर्देशक, [2]लेखक एवं शोधार्थी
प्राचार्य
महिला महाविद्यालय
सागवाड़ा (डूंगरपुर)

हरिराम मीना वर्तमान समय में आदिवासी साहित्य में चर्चित रचनाकार तथा विमर्शकार के रूप में प्रसिद्ध हो चुके हैं। यूं तो उनके लेखन की शुरुआत कविताओं से ही हुई है मगर उनको कथाकार के रूप में अधिक ख्याति प्राप्त हुई है जिनमें उपन्यास, कहानी,यात्रावृत्त तथा संस्मरण प्रमुख हैं। हरिराम मीना स्वयं भी राजस्थान के 'मीना'आदिवासी समुदाय से सम्बंध रखते हैं। जिसका प्रभाव उनके साहित्य में भी देखा जा सकता है। इनके अबतक प्रकाशित कविताओं के संग्रह हाँ, चाँद है मेरा, सुबह के इंतजार में, आदिवासी जलियांवाला तथा अन्य कविताएं प्रमुख हैं। इन संग्रह की कविताओं को पढ़ने से ज्ञात होता है कि इनकी कविताओं का विषय वैविध्य है। कवि ने आदिवासी विमर्श के साथ- साथ समकालीन कविता के अनुभूति पक्ष को भी अपना रखा है। यही कारण है कि उनकी कविता में विषय की दृष्टि से अनेकानेक स्वरूप देखने को मिलता है। वह कभी प्रगतिशील दृष्टि से समाज को देखता है, कभी मिथकीय दृष्टि से संसार को परखता है। कभी प्रकृति के विविध बिम्ब बुनता है और कभी जीवन की सत्यता को सामने लाता है तो कभी दार्शनिक रूप से संसार को तार्किक दृष्टि से देखने का प्रयत्न करता है। हमारा ध्येय यहाँ पर उनकी आदिवासी कविताओं के कथ्य पर ही विचार करना है। हरिराम मीना ने कविता बनने की प्रक्रिया के बारे में 'हाँ, चाँद मेरा है' संग्रह की भूमिका में इस बात को स्वीकार किया है कि काव्य लेखन एक प्रवाह है जो वैयक्तिक प्रक्रिया के रूप में प्रगट होता है। वे लिखते हैं- "जब कोई एकांति मन अपने भीतर के तहखानों को परत- दर -परत उघाड़ता चला जाता है और अँधेरे में भटकते किसी अनजान प्रकाश कण से टकराता है तो शायद कविता होती है। जब परिवेश में घटित हो रही असंख्य घटनाओं में से कोई एक स्वयं से मेल खाती है तो शायद कविता होती है जब हिमालय के उतुंग श्रृंगों को छू रहे मेघों का कोई हल्का सा रेशा समुद्रों में बिखरे अन्तरियों के पग तलों में से लिपटे किसी भारी जल कण से वार्तालाप करता है तो शायद कविता होती है"।1

हरिराम मीना की कविताओं में आदिवासी समाज की विसंगतियों और विडम्बनाओं की वह सच्चाई है जिसमें आदिवासी वर्ग पीड़ा, वेदना से ग्रस्त होकर कराह रहा है और सभ्य समाज तमाशबीन बनकर उनका बहुविध मजाक बना रहा है। उनके अभिशप्त जीवन की विडंबना को सुधारने के लिए न तो सरकार आगे आ रही है और न आम जनता जो लोकतंत्र का प्रहरी भी है, निर्णायक है, नियामक भी। यह कैसा समाज है,जहाँ विकास की दौड़ में सबसे अंतिम पायदान पर खड़ा प्रकृति पुत्र जो यहाँ का अनादिकाल से निवासी हैं वह अपने लिए कोई प्रतिरोध नहीं कर पा रहा है। इसी सच्चाई को वे अपनी कविताओं में लगातार उठाते रहे हैं।

'बिरसा मुंडा की याद में' नामक कविता में आदिवासी समाज के संघर्ष की गाथा है और यह दिखाया गया है बिरसा मुंडा किस तरह अंग्रेजी शासन के विरुद्ध प्रतिरोध करके उनकी सत्ता को चुनौती देता है। वह जानता था कि इतनी बड़ी हुकूमत के खिलाफ लड़ाई में उनका नुकसान हो सकता है; मगर वह हार नहीं मानता और अपने साथियों के साथ भारी प्रतिरोध करता है और अंततः ब्रिटिश हुकूमत उसे जेलों की सलाखों में कैद कर देती है तथा धोखे से उसे मिट्टी का तेल डालकर आग के हवाले कर देती है।आजादी के इतिहास पर नजर डालें तो स्वतंत्रता संग्राम में आदिवासियों ने बहुत योगदान दिया था लेकिन उनके योगदान को इतिहास ने गाया नहीं, पहचाना नहीं, संजोया नहीं। यह एक विडम्बनापूर्ण स्थिति है कि जिन आदिवासियों ने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अलग-अलग क्षेत्रों में अहं योगदान दिया लेकिन उस गाथा को इतिहास में न हो महत्व दिया गया और न ही स्मरण किया गया,उस पीड़ा की अभिव्यक्ति इस कविता में देखी जा सकती है–

" अभी-अभी
सुन्न हुई उसकी देह से
बिजली की लपलपाती कौंध निकली

जेल की दीवार लाँघती
तीर की तरह जंगलों में पहुँची
एक-एक दरख्त, बेल, झुरमुट
पहाड़, नदी, झरना
वनप्राणी-पखेरू, कीट, सरीसृप
खेत-खलिहान, बस्ती
वहाँ की हवा, धूल, जमीन में समा गई.....
एक अनहद नाद गूँजा-
''मैं केवल देह नहीं
मैं जंगल का पुश्तैनी दावेदार हूँ
पुश्तें और उनके दाव मरते नहीं
मैं भी मर नहीं सकता
मुझे कोई भी
जंगलों से बेदखल नहीं कर सकता
उलगुलान!'
उलगुलान!!
उलगुलान" 2

इसी प्रकार हरिराम मीना ने 'आदिवासी लड़की' नामक कविता में कथित सभ्य समाज पर करारा व्यंग्य किया है। कथित सभ्य वर्ग के कवि की सौंदर्य दृष्टि पर उन्होंने करारा प्रहार करते हुए लिखा है-

"अहा,
क्या कहना कवि
तुम्हारे सौन्दर्य-बोध का
अब इन परिकल्पित-ऊँचाइयों पर
स्वप्निल भाव-तरंगों के साथ उड़ते
कलात्मक शब्द-यान से नीचे उतर कर
चलो उस अंचल में
जहाँ रहती है वह आदिवासी लड़की
देखो गौर से उस लड़की को
जिसके गोल-गोल गालों के ऊपर
-ललाट है
जिसके पीछे दिमाग
दिमाग की कोशिकाओं पर टेढ़ी-मेढ़ी खरोंचें
यह एक लिपि है
पहचानो,
इसकी भाषा और इसके अर्थ को
जिन्हें तुम उन्नत उरोज कहते हो
प्यारा-सा दिल है उनकी जड़ों के बीच
कँटीली झाड़ियों में फँसा हुआ
घिरा है थूहर के कुँजों से
चारों ओर पसरा विकट जंगल
जंगल में हिंसक जानवर

जहरीले साँप-गोहरे-बिच्छू
इस केनवास में
उस लड़की की तस्वीर बनाओ कवि
अपना रंगीन चश्मा उतार कर देखो
लड़की की गहरी नाभि के भीतर
पेट में भूख से सिकुड़ी उसकी आँतों को
सुनो उन आँतों का आर्तनाद
और
अभिव्यक्त करने के लिए
तलाशो कुछ शब्द अपनी भाषा में"।3

कवि इस कविता में उस सच्चाई को अभिव्यक्त कर रहा है कि सभ्य समाज के लोग आदिवासी लड़कियों के जिश्म व पहनावे को देखकर ऊलजलूल कविता लिखते हैं, उनके सौंदर्य का मांसल चित्रण करते हैं। इस बात को लेकर कवि आक्रोशित है और अपना आक्रोश इस कविता में अभिव्यक्त किया है।

विस्थापन आदिवासी समाज की सबसे बड़ी पीड़ा है। विकास के नाम पर, आधुनिकरण के नाम पर,बांध बनवाने के नाम पर,खनन के नाम पर इत्यादि कारणों के तहत सम्पूर्ण देश में आदिवासियों का बड़ी संख्या में सरकार ने विस्थापन किया है। इस विस्थापन से आदिवासी तन-मन से टूट गया है,उनके समक्ष अस्तित्व व अस्मिता का संकट खड़ा हो गया है। इसी सच्चाई को उजागर 'अंडमानी आदिवासियों को बेदखल होते देखकर' नामक कविता में किया है-

"सभ्यता के नाम पर
आखिर कर ही दिए जाओगे बेदखल
हजारों सालों की तुम्हारी पुश्तेनी भौम से
कोई और होंगे अब कानूनी हकदार
नारियल के इन दरख्तों के
चौकोगें भयानक आश्चर्य से
देखकर हरे कबूतरों को नदारद
कि अब
कहाँ आसरा पाएंगी मृत शिशुओं की आत्माएँ
पुनर्जन्म तक"।4

'सरदार बख्तावर सिंह से मिलकर' कविता में कवि ने उस हकीकत की तरफ इशारा किया है कि बुद्धिजीवी समाज आदिवासियों का बाजारीकरण कर रहा है और उनके प्रकतिमय जीवन को अपनी दृष्टि सुख का कारण बना रहा है, इसी यथार्थ की अभिव्यक्ति इस कविता में देखी जा सकती है-

"इस बदहवासी
और स्वार्थी सभ्यता के बीहड़ों में
एक तुम ही तो नजर आए
प्रेम के पाँखी
नहीं तो हमें लोग ऐसे मिले
जैसे कोई क्रेज पाले हो
किसी विरले वन्य- जीवन को देखने का या
बीड़ा उठा रखा हो
हमें हमारी भौम से खदेड़ने का
या फिर हमें बंदरो की तरह मान

खाद्य-सामग्री देने का
ताकि,खींच सके वे फ़ोटो
और फिर दिखाते रहे जिंदगी भर
कि हम भाग्यशाली हैं
जो देख आये
अंडमान के नंगे आदिवासियों को"।5

कवि ने 'जारवा आदिवासी को स्वप्न में देखकर' शीर्षक कविता में जारवा समाज के यथार्थ को व्यक्त किया है। मिथकीय सन्दर्भों के माध्यम से इस कविता में यह व्यक्त किया गया है कि द्रोणाचार्य ने एकलव्य का गुरुदक्षिणा में अँगूठा लिया यह सिर्फ मिथकीय धारणा नहीं है अपितु इतिहास का यथार्थ भी है। सभ्य समाज ने सदैव एकलव्य जैसे आदिवासियों का अँगूठा दान में लिया है। कविता में लिखते हैं-

"तुम्हें लाल रंग क्यों पसन्द है जारवा-पुत्र,
(क्षमा करना, इस सम्बोधन में 'आर्य-पुत्र' की
अभिजात्य अनुगूँज नहीं समझता।)
क्या यह अनुराग की व्यंजना है
या लक्षणा लाल खून की
जिससे साबित होती है जिन्दगी
-या अभी-अभी हुई मौत।
ऐसा तो नहीं जारवा-पुत्र
कि मस्तिष्क की कन्दराओं से
सुनाई देती हों-
अबेदीन की दनदनाती बन्दूकों की
-धधकती आग्नेय प्ररतिध्वनियं ा
और याद आता हो
काले पानी से घिरी काली धरती का
ऊबड़-खाबड़ रूधिरस्नात रणक्षेत्र।
बनाओ जारवा-पुत्र
क्या तुम्हारा कोई वास्ता है
आदिम बनाम आक्रान्ताओं के
चतुर्युगीय संघर्षों की दास्तान से
उनके एकपक्षीय गौरवगान से
जिसे सुनकर अभी भी
चैंक पड़ते हैं-
बाली और शम्बूक के रक्त-रंजित अमुक्त प्रेत
और प्रश्न बन खड़ा होता है
द्रोणाचार्य के काँपते हाथों में
खून से लथपथ एकलव्य का
-तड़पड़ाता अँगूठा" ? 6

इसी कड़ी में 'सभ्यता के विस्तार के नाम पर हादसा' नामक कविता एक ऐसे सत्य की अभिव्यक्ति है जिसे कमोबेश रोज आदिवासी समाज का व्यक्ति झेलता है। बड़े दबे पाँव सभ्य समाज का व्यक्ति उनके परिक्षेत्र में परिवेश करता है और अपनी रणनीति से न केवल मानसिक रूप से पराजित करता है, बल्कि शारिरीक रूप से भी उन्हें अक्षम बना देता है। वह इस तरह की स्थिति का निर्माण करता है कि आदिवासी समाज यंत्रवत

उसका आज्ञाकारी बनकर उसके सामने घुटने टेकने को मजबूर हो जाता है। वे उसे आर्थिक रूप से भी पंगु बना देते हैं, उन पर कर्ज लादकर उनकी जमीन जायदाद तक हड़प लेते हैं। इस कविता में आदिवासी जीवन की इसी सच्चाई की अभिव्यक्ति हुई है-

"सभ्यता के विस्तार के नाम पर हादसा देखो!
वो आ रहे हैं
तुम देख रहे हो
तुम्हारी नसें तन रही है
तुम्हारी भुजाएँ फड़क रही है
तुम्हारे तीर कमान तनें है
तुम एकजुट हो
मगर तुम कुछ नहीं कर सकते हो?
देखो! वो तुम्हारे टापू की तीर पर है
अब तुम्हारे टापू पर आ चुके हैं
तुम छिप क्यों रहे हो
तुम आक्रमण कर सकते हो
मगर तुम डर रहे हो
क्यों ? आखिर क्यों ? ?
देखो! उन्होंने कब्जा कर लिया है
तुम्हारी जमीन पर
तुम्हारी नारियल के जंगलों पर
तुम्हारी मोटी सुपाडियों के पेड़ों पर
देखो! उन्होंने आखिर तुम्हें खदेड़ ही दिया
तुम्हारी जमीन से
तुम्हें नेस्तनाबूद करने के लिए
और तुम चुप हो"। 7

कवि ने 'भीलणी' शीर्षक कविता में भी आदिवासी महिलाओं की गरीबी,लाचारी,बदहाली तथा दीन- हीनता का वर्णन बड़ी मार्मिकता के साथ किया है। आदिवासी महिलाओं का जीवन किस प्रकार से डग- डग पग- पग पर संघर्षों से भरा हुआ है,रोजी रोटी तथा परिवार को सहारा देने हेतु जंगलों से तपती गर्मी में भी लड़कड़ियाँ इकट्ठी करती है। उसकी कांचली फ़टी चुकी है,घाघरा भी तार तार है और जूतियाँ भी फट चुकी है। पेट भरने के लिए पर्याप्त भोजन नहीं है, फिर भी अदम्य जिजीविषा है उसमें। इस कविता में कवि की वेदना इतनी गहरी है कि इसे पढ़ते वक्त सहृदय भावुक हो जाता है।

कविता का अंश देखिए -

"इस बहुरंगी दुनिया में
मेवाड़ी धरती
उस धरती मे विरल भीलणी
निर्मल, शुभ्र हृदय उसका
पर
तम-आच्छादित उसकी काया
किन अतीत के अभिषापों की
काली छाया
पड़ी निरन्तर
उसके तन पर

ले दोपहरी से अंगारे
धूणी रमती
वन वन फिरती
वह तपस्विनी
श्रम की देवी।

फटा घाघरा
तन से लिपटा
तार-तार चोली
लज्जा की रक्षा करती
अन्तिम साँसें रोक ओढ़नी
सर को ढकती"। 8

निष्कर्ष:

हरिराम मीना की उपरोक्त आदिवासी कविताओं पर विचार करने पर यह निचोड़ निकलता है कि आदिवासी समाज को लेकर वे बहुत सचेत, जागरूक, संवेदनशील तथा गम्भीर कवि है। वे अपने काव्य के द्वारा आदिवासियों से सम्बंधित हर स्थिति का अवलोकन करते हैं। वे आदिवासियों के जीवन-दर्शन, सभ्यता-संस्कृति, रीति-रिवाज, उनके अस्तित्व की समस्या, जल-जमीन-जंगल का संकट,विस्थापन का दंश,गरीबी, बेरोजगारी, बाजारीकरण, शारिरीक-मानसिक शोषण, शिक्षा का अभाव, सरकारी दमन,अत्याचार इत्यादि मुद्दों को लेकर उनके साथ पूरी संजीदगी के साथ खड़े हुए दिखाई देते हैं। अतः उनकी आदिवासी कविताएँ इस बात का पुख्ता सबूत है।

सन्दर्भ सूची:

1.हरिराम मीना, 'हाँ, चाँद मेरा है',भूमिका,जगतराम एंड सन्स दरियागंज,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999
2.हरिराम मीना, 'सुबह के इंतजार में', शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2008, पृष्ठ सं.25,26
3.हरिराम मीना, 'आदिवासी जलियांवाला एवं अन्य कविताएं,'वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ सं.50,51,52
4.हरिराम मीना, 'सुबह के इंतजार में', शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2008, पृष्ठ सं.30,31
5.हरिराम मीना 'सुबह के इंतजार में', शिल्पायन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2008, पृष्ठ सं.38
6.हरिराम मीना, 'हाँ, चाँद मेरा है',जगतराम एंड सन्स दरियागंज,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999,पृष्ठ सं. 35,36
7.हरिराम मीना, 'आदिवासी जलियांवाला एवं अन्य कविताएं', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ सं. 20,21
8.हरिराम मीना, 'हाँ, चाँद मेरा है',जगतराम एंड सन्स दरियागंज,नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999 पृष्ठ सं. 65,66,67